शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 मई 2014

कालिदास के रूपकों में नारी समस्या

जहाँ आरा (शोधार्थी)
अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय,
अलीगढ़, उत्तरप्रदेश, भारत

शोध संक्षेप

संवेदनशील नारी समाज और सामाजिक क्रिया का अटूट अंश है। सभ्यता और संस्कृति के विकास में उसने सदैव योगदान दिया है। सुशीलता, तितिक्षा, समर्पण, उत्सर्ग व्यवस्था, लज्जा और प्रेम की साक्षात प्रतिमा नारी कन्या, गृहिणी, सहचरी और माता के कर्मठ रूपों में परिवार, समाज और राष्ट्र की मंगल विधात्री है। नारी वर्ग के प्रति अनास्था समाज की हीनता का द्योतक है। नारी के चरित्र की रक्षा करना सुव्यवस्थित समाज की पहली शर्त होनी चाहिए, किन्तु इस प्रकार की आदर्श व्यवस्था का पालन नारियों के लिए तब तक सम्भव नहीं हो सकता जब तक पुरुष वर्ग की ओर से भी उन्हें इस कार्य में सहयोग नहीं मिलता। प्रस्तुत शोध पत्र में कालिदास के रूपकों में नारी समस्या का अवलोकन किया गया है।

प्रस्तावना

पुरुष और नारी के सन्तुलित प्रयास में सामाजिक व्यवस्था मर्यादित रखी जाती है। प्राचीनकाल से आज तक इस पुण्यभूमि भारत वर्ष में नारी की विभत्स घर्षणा होती रही है, जिसके स्मरणमात्र से रोम-रोम उठ खड़े होते हैं। परन्तु इसमें बेचारी नारी का क्या दोष ? नारी सर्वदा से ही पुरुष की छत्रछाया में अपनी गुण-गरिमा का विस्तार करती आयी है। इसकी छत्रछाया, रक्षा का उत्तरदायित्व पुरुष के ही ऊपर है परन्तु इन नामधारी पुरुषों की दुर्बलता तथा अपमानसहिष्णुता के कारण ही नारी की भयावह स्थिति देखी जाती है।

रूपकों में नारी समस्या

कालिदास के रूपकों पर यदि आलोच्य दृष्टि से दृष्टिपात करें तो यह ज्ञात होता है कि इनके समय तक आते-आते भारतवर्ष में रहे सहे गणतंत्र समाप्त हो गये थे। सारे अधिकार एक राजा में केन्द्रित होने लगे और राजा का पुत्र भी राजा होने लगा। राज्यत्व की प्राप्ति कर्म के स्थान पर जन्म पर निर्भर होने के कारण राजा और उसके साथ उच्चवर्ग का भोग विलास में लिप्त होना स्वभाविक था। बहुपत्नीत्व प्रथा के आरम्भ के साथ स्त्री के सामाजिक महत्व का ह्रयस होना आरम्भ हो गया। तत्कालीन समय में नारी की स्वतंत्रता नाम मात्र की रह गयी थी, उस पर गुरुजन, पिता 1, पति 2 का कठोर नियंत्रण रहता था। इनके तीनों ही रूपकों में पुरुषों की विलासी प्रवृत्ति के कारण स्त्रियों का जीवन आतंकित दिखाई पड़ता है। इनके रूपकों में शासक चाहे अग्निमित्र हो, पुरुरवा हो या दुष्यन्त सभी की कई पत्नियाँ थीं। इनमें से अग्निमित्र तो प्रौढ़ है और एक पुत्र का पति भी, फिर भी वह मालविका से प्रेम करता है। मालिका को देखकर रनिवास के सभी रानियों से उसका मन उचट जाता है।3

इसके नित्य नूतन कलह से परिवार में कलह होना स्वाभाविक था। मालविकाग्निमित्र नाटक में पत्नी धारिणी अग्निमित्र और मालविका की प्रणयलीला को देखकर मालविका को बंदीग्रह में डलवा देती है।4 वहीं दूसरी पत्नी इरावती अपनी करघनी से राजा को पीटने के लिए उद्यत हो जाती है।5 पत्नियों का इस प्रकार से क्रोध नारी की मनोवेदना और अशांत जीवन की में रानी इरावती अपनी व्याकुलता को प्रकट करता है। इसी नाटक के तृतीय अ पति की कामुक वृत्ति से तंग आकर कहती है-"सचमुच पुरुषों का कोई विश्वास नहीं। मैं क्या जानती थी कि जैसे व्याधों के गीत सुनकर हरिणी सब सुध-बुध खोकर जाल में फँस जाती है, वैसे ही मैं इनकी चिकनी-चुपड़ी बातों पर विश्वास करके इनके फन्दे में फँस जाऊँगी।"6

विक्रमोर्वशीयम् नाटक में भी पुरुरवा उर्वशी के प्रेम में अपनी पत्नी औशीनरी की उपेक्षा करता है। परन्तु पत्नी औशीनरी को अपने प्रेम के कारण दूसरी पत्नी भी स्वीकार्य थी। वह विदूषक से कहती है "मैं अपने सुख का बलिदान करके भी आर्यपुत्र को सुखी देखना चाहती हूँ।"7 वह रोहिणी और चन्द्रमा के दैवी जोड़ी को साक्षी बनाकर आर्यपुत्र को प्रसन्न करती है और कहती है- "आज से जिस स्त्री को भी आर्यपुत्र चाहेंगे और जो भी स्त्री आर्यपुत्र की पत्नी बनना चाहेगी उसके साथ बड़े प्रेम से रहा करूँगी।"8 वास्तव में कितनी विवशताजन्य सहिष्णुता है यदि रानी इस व्यवहार को न भी प्रकट करतीं तो भी राजा के आचरण में कोई परिवर्तन होने वाला नहीं था। इसलिए जो अनिवार्य था रानी ने उसी से समझौता कर लिया। वहीं पुरुरवा जो उर्वशी के प्रेम में पागल था उसे वह साथ लेकर गन्धमादन वन में विहार करने जाता है। वह विद्याधर की पुत्री उदयवती को देखकर उर्वशी को तो क्या स्वयं अपनी ही सुधबुध खो बैठता है। उसके इस स्वभाव से उर्वशी क्रोधित हो जाती है। प्रेम की अधिकता के कारण उर्वशी का इस प्रकार क्रोधित होना स्वाभाविक था।9 अपनी कामुक प्रवृत्ति के कारण ही उसे उर्वशी के वियोग में बहुत समय तक विलाप करना पड़ता है। अभिज्ञानशाकुन्तलम् नाटक में दुष्यन्त भी अपनी पत्नी हंसपदिका तथा अन्य स्त्रियों की उपेक्षा कर शकुन्तला से गान्धर्व विवाह करता है। हंसपदिका का विरह व्यथित गान 10 जब उसे सुनाई देता है तब हंसपादिका की मनोव्यथा को सुनकर उसका मन तक नहीं पसीजता। विदूषक द्वारा गीत के बोल पर ध्यान आकर्षित कराये जाने पर वह कहता है- "मैंने इससे केवल एकबार प्रेम किया था, अतः आजकल जो वसुमति से प्रेम करने लगा हूँ, उसी पर यह मुझे उपालम्भ दे रही है।11 उसके द्वारा कथित इन वचनों से नारी के स्वाभिमान को ठेस ही नहीं पहुँचती अपितु उनकी दुर्दशा को व्यक्त करती है। साथ में यह भी स्पष्ट होता है कि राज परिवार में नारी केवल अस्थायी मनोरंजन का साधन बन गयी थी। और तो और राजा दुष्यन्त शकुन्तला के साथ प्रेम विवाह करके उसे अपने साथ राजधानी नहीं ले गया। और जब शकुन्तला उसके पास पहुँचती है तब वह यह नहीं जानता कि सामने खड़ी महिला उसकी पत्नी है। वह उसे पत्नी मानने से इनकार कर देता है,12 तथा पुरोहित से मार्गदर्शन चाहता है। सत्ता के मद में उसने फूलों की तरह कोमल हृदय वाली शकुन्तला का परित्याग कर नारी जाति को अपमानित किया है। कालिदास ने राजा के चरित्र के लिए यहाँ शाप की कल्पना का सहारा लिया

है। पर जो भी हो उन्होंने रूपकों में राजाओं के चरित्र को चित्रित कर तत्कालीन समय के पुरुषों की प्रवृत्तियों को हमारे समक्ष प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। उस समय समाज में पतिव्रता स्त्री का पति के घर रहना ही उचित समझा जाता था। पति के द्वारा ठुकराये जाने पर भी शकुन्तला को दासी बनकर पति के घर रहना स्वीकार्य था तभी तो दुष्यन्त कहता है- "यदि राजा के द्वारा शकुन्तला को ठुकराए जाने की बात सत्य है तो तुझ जैसी कुल कलंकिनी का पिता के घर कोई काम नहीं है और यदि तू अपने को पवित्र समझती है तो तुझे दासी बनकर ही पति के घर में रहना चाहिए।"13

निष्कर्ष

सम्पूर्ण विश्लेषण से यह ज्ञात होता है कि तत्कालीन समाज में पुरुष प्रधान व्यवस्था में मानो स्त्रियाँ भोग विलास तथा उत्पीड़न के लिए ही जन्म लेती थीं। नूतन स्त्रियों के प्रणय सम्बन्ध से इनका जीवन कलुषित एवं कलहपूर्ण दिखाई देता है। बहुविवाह तथा भार्यापरित्याग से नारी के आत्मसम्मान को गहरी ठेस पहुँची है। वहीं पति का एक स्त्री के प्रति अधिक झुकाव से दूसरी स्त्रियों की उपेक्षा हुई है। स्त्रियाँ पुरुषों की कामुक प्रवृत्ति से तंग आकर अपने भाग्य को कोसते हुए, अपनी स्थिति के साथ समझौता करती हुयी नज़र आती हैं। पत्नी चाहे पति की प्रिय हो अथवा अप्रिय उसको अपने पति के घर में दासी बनकर रहने के लिए बाधित किया जाता था।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1.आर्य! धर्माचरणेऽपि परवशोऽयं जनः। गुरोः पुनरस्या अनुरूपवरप्रदाने संकल्पः। अ0शा0 1/पृ0 21

2.उपपन्ना हि दारेषु प्रभुता सर्वतोमुखी। वही 5/26

3.सर्वान्तः पुरवनिताव्यापारप्रतिनिवृत्तहृदयस्य। मा0वि0 2/14 लाक्ष्या सारभाण्डभूगृहे गुहायामिव निक्षिप्ता।

4.सा खलु तपस्विनी तया पि वही 4/पृ0 315

5.वही 3/पृ0 312 चनावचनं प्रमाणीकृत्याक्षिप्तया

6.अविश्वसनीयाः पुरुषः। आत्मनो व व्याधजन-गीतगृहीतचित्तयैव हरिणयैतन्न विज्ञातं मया। मा0वि0 3/पृ0 310

7.अहं खलु आत्मनः सुखावसानेनार्यपुत्रं निर्वृतशरीरं कर्तुमिच्छामि। विक्रमो 3/पृ0 206

8.अद्य प्रभृति यां स्त्रियमार्यपुत्रः प्रार्थयते या चार्यपुत्रस्य समागमप्रणयिनी तया सह मयाप्रीतिबन्धेन वर्तितव्यम् इति। वही, 3/पृ0 205

9.वही, 4/पृ0 213 जरीम्

10.अभिनवमधुलोलुपो भवाँस्तथा परिचुम्ब्य चूतम कमलवसतिमात्रनिर्वृतो मधुकर विस्मृतोऽस्येनां कथम्।। आ0शा0 5/1 11.तदस्या देवीवसुमतीमन्तरेण मदुपालम्भमवगतोऽस्मि.। वही 5/पृ0 80

12.अ0शा0 5/पृ0 87-88 13.यदि तथा वदति क्षितिपस्तथा त्वमसि किं पितुरुत्कुलया। अथ तु वेत्सि शुचिव्रतमात्मनः पतिकुले तव दास्यमपि क्षमम्।। अ0शा0 5/27